तिथि–10 अप्रैल 2020
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, १२१
युगाब्द-५१२१, अंक-१२५, वर्ष-१३
वैशाख विक्रमी २०७७ (अप्रैल 2020)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्र: 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

ऋषि दयानन्द

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

तमीळत प्रथमं यज्ञसाधं विश आरीराहुतमृञ्जसानम्। ऊर्जः पुत्रं भरतं सृप्रदानुं देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् ॥ –ऋ० १। ७। ३। ३॥

व्याख्यान–हे मनुष्यो! (तमीळत) उस अग्नि की स्तुति करो। कैसा है वह अग्नि? (प्रथमम्) सब कार्यों से पहले वर्त्तमान, और सब का आदि कारण है। तथा (यज्ञसाधम्) सब संसार और विज्ञानादि यज्ञ का साधक (सिद्ध करनेवाला) सब का जनक है। हे (विशः) मनुष्य! उसी को ही स्वामी मानकर (आरीः) प्राप्त होओ [(आहुतम् ऋञ्जसानम्)] जिसको हम अपने पुकारते हैं, और जिसको विज्ञानादि से विद्वान् लोग सिद्ध करते हैं, और जानते हैं, [वही] (ऊर्जः पुत्रं भरतम्) पृथिव्यादि जगत्रूप अन्न का पुत्र अर्थात् पालन करनेवाला तथा भरत अर्थात् उसी अन्न का पोषण और धारण करनेवाला है। (सृप्रदानुम्) सब जगत् को चलने की शक्ति देनेवाला और ज्ञान का दाता है। उसी को (देवा अग्निं धारयन् द्रविणोदाम्) देव (विद्वान् लोग) अग्नि कहते, और धारण करते हैं। वही सब जगत् को द्रविण अर्थात् निर्वाह के सब अन्न जलादि पदार्थ और विद्यादि पदार्थों का देनेवाला है। उस (अग्नि) परमात्मा को छोड़के अन्य किसी की भक्ति वा याचना कभी किसी को न करनी चाहिए ।४०।।

सम्पादकीय

चीनी विषाणु और तालिबानी सोच

जैसा कि हम सभी जानते हैं और अभी भी जान ही रहे हैं कि संसारभर के विकसित कहे जाने वाले देशों सहित लगभग सभी देशों को "चीनी विषाणु' (चाइनीज वायरस) कोविड-19 ने ग्रस्त एवं त्रस्त किया हुआ है, चीन से इटली, स्पेन, फ्रांस के बाद यदि इस समय इस चाइनीज वायरस से कोई सबसे अधिक त्राहि-त्राहि कर रहा है, तो वह वर्त्तमान विश्व सबसे शक्तिशाली देश अमेरिका है, जहाँ मृत्यु के मुख में बीस सहस्र (हजार) से भी अधिक लोग समा चुके हैं और अभी यह गणना पचास सहस्र तक पहुंच सकती है, ऐसी भीषण और भयावह परस्थिति में हमारा अत्यन्त उदारवादी ढ़ीली-ढ़ाली व्यवस्था वाला देश, अपनी लगभग एक सौ चालीस करोड़ जनसंख्या को इस चायनीज वायरस से बचाने में यदि सफल होता दिख रहा था तो यह एक उत्साह का संचार करने वाला, आल्हादकारी सुसमाचार ही था। सारा विश्व भी इस चमत्कार पर विचार कर ही रहा था कि आखिर कैसे सर्वदा एवं सर्वथा नियमों (कानूनों) की धज्जियाँ उड़ाने वाला देश 'सम्पूर्ण बन्द' (लॉकडाउन) के पालन में तत्पर होकर एक वैश्विक महामारी से अंगुलि गणनीय हानि के साथ सुरक्षित बच निकलने में सफल हो रहा है। कि तब तक सभी प्रान्तों एवं महानगरों में निवास करने वाले मजदूर वर्ग में अपने-अपने घर-परिवारों का मोह जाग उठा, और लगने लगा जैसे सारे देश के सभी लोगों का संयम और तप व्यर्थ हो जाएगा, किन्तु प्रभु कृपा से उस जन प्रवाह से भी हम बच निकलने की ओर अग्रसर हो ही रहे थे कि सहसा दिल्ली के हजरत निजामुद्दीन स्थित तबलीगी जमात के मरकज (विश्व स्तर का तबलीगी जमात का मुख्यालय) से इस महामारी बम्ब फूट पड़ा। जिसके विकिरण (जमाती) अभी सम्पूर्ण देश में यहाँ-वहाँ प्राप्त हो ही रहे हैं। कुछ छुपे हैं, कुछ यात्रा कर रहे हैं, कुछ पकड़ में आये हैं तो कुछ पकड़े जाने शेष हैं।

ऐसी भीषण, भयानक परिस्थिति में हम सभी मनुष्य मात्र का यह विचार करना आवश्यक है कि सभी शासन-प्रशासन, सरकारों द्वारा जारी निर्देशों (गाइड लाइन) का योजनाबद्ध, बुद्धिपूर्वक तिरस्कार करके यह 'तबलीगी जमात' के लोग क्या पाना चाहते थे? इनका लक्ष्य क्या था? सोच क्या थी? आखिर अपने ही घर-परिवारों एवं अपने ही समाज के लोगों में मौत बांटकर यह कैसे मजहब का प्रचार करना चाहते थे? और रहस्य खुलने पर..... पकड़े जाने पर ..... लोगों पर थूकना, अपने ही बचाने वालों के साथ अभद्रता, अश्लीलता और वहशी दरिन्दों जैसा व्यवहार करना क्या दर्शाता है?

शेष अगले पृष्ठ पर ....

सम्पादकीय का शेष ....

पाठकगणों! हम सभी जानते हैं कि मनुष्यमात्र के लिए सर्वाधिक सबसे महत्त्वपूर्ण है विचार, जिस-जिस मनुष्य को जैसे-जैसे विचार मिलते हैं, वह-वह मनुष्य वैसे-वैसे ही अपने जीवन में आगे बढ़ता है। यदि विचार श्रीराम, श्री लक्ष्मण एवं श्री शत्रुघ्न जैसे भातृप्रेम के मिले तो रामायण बनती है और विचार देने वाला कोई मामा शकुनि और पिता धृतराष्ट्र जैसा मिल गया तो तब उत्पन्न होते हैं दुर्योधन, दु:शासन जैसे पुत्र, जिनके प्रबल परिश्रम से 'महाभारत' होता है, जिसमें अपने ही अपनों का रक्तपात करते और लाशें बिछाते हैं। यह दोनों इतिहास हमारे अपने ही आर्य पूर्वजों के हैं। किन्तु जब हम विचार करते हैं कि कुछ हजार वर्षों के अन्तराल में जन्मे भिन्न-भिन्न रिलीजनों, मजहबों, मतों और पन्थों का, तो फिर कहना ही क्या है? कैसे-कैसे क्षुद्र विचार इनके स्थापना काल से ही इनके अनुयायी जनों को मिले हैं, उन विचारों का ठीक-ठीक विश्लेषण एक सनातन वैदिक ही कर सकता है, वही सत्य-असत्य, उन्नति और पतन की ओर ले जाने वाले विचारों को जान सकता है। अत: जब हम लगभग साढ़े चौदह सौ वर्ष पुराने 'इस्लाम मजहब' के मूल विचारों को जानते हैं तब स्पष्ट हो जाता है कि यह संसार नाशवान है, यहाँ अल्लाह ने जो रहमत की है, यह हमेशा हमारे पास न रहेगी, फिर जो कुछ भोग की वस्तुएँ जर, जोरू और जमीन यहाँ है भी, वह भी सभी के पास नहीं है, है भी तो कम और ज्यादा है। ऐसे में यदि अधिक से अधिक सुख पाना है, भोग की सामग्री- बहुत सा धन (जर, असर्फियां, सोना, चांदी, हीरे, जवाहरात), बहुत सी सुन्दर औरतें (जोरु) और बहुत सुन्दर उपजाऊ अर्थात् सस्य श्यामला, ऊर्वरा भूमि जहाँ नाना प्रकार के फल-फूल, अन्न-जलादि, शहद, घृतादि पाना है तो उसके लिए दो रास्ते हैं- 1. धरती पर जहाँ-जहाँ यह सब है, उस धरती को अपने कब्जे में करो, धरती पर कब्जा करते समय वहाँ के धन को लूटो, युवा महिलाओं का उपभोग करो उन्हें अधिक से अधिक अपने कब्जे में करो। तब सुख मिलेगा।

तब लोगों ने प्रश्न किया कि ऐसा करते हुए यदि जान ही चली गयी तो जो था, वह भी न रहेगा, तब क्या मिलेगा? तब इस्लाम के पैगम्बर मोहम्मद ने कहा- तब मरने के बाद जन्नत मिलेगी, बहिश्त मिलेगा। अनुयायी लोगों ने पूछा वहाँ क्या है? तब उन्होंने उत्तर दिया कि वहाँ जर, जोरू और जमीन की कोई कमी नहीं हैं। भरपूर धन-दौलत है, कल्पना से भी ज्यादा, हूरें हैं, गिल्में हैं, दूध, दही, घी, शहद और जो मन करे वह सब कुछ है, साथ ही एक लाभ और है वहाँ जो कुछ मिलेगा वह छूटेगा नहीं अर्थात् लगातार मिलता रहेगा/मिलती रहेगी ....। बस फिर क्या था? इस्लाम के स्थापना काल से ही जर, जोरु और जमीन के लिए जो अपने ही मत वालों को मार सकते हैं, अपनी ही मस्जिदों में बम फोड़ सकते हैं, आत्मघाती बनकर शरीर पर बम बांधकर अपने ही लोगों की भीड़ के बीच में विस्फोट करके अपने ही शरीर को चिन्दी-चिन्दी उड़ा सकते हैं। तो फिर एक वायरस को फैलाने में क्या दोष? क्या बुराई? फिर क्यों मानें शासन-प्रशासन एवं सरकारों के निर्देश? क्योंकि बात स्पष्ट है पाना है भोग चाहे धरती पर मिले चाहे जन्नत में। लक्ष्य है भोग की प्राप्ति। सोच है- मजहब का विस्तार या जन्नत। इसलिए चाहे अपने मरें या पराया? चाहे घर जले या महल? डॉक्टर मरे या नर्स, पुलिस हो चाहे फोर्स? रक्षक हो चाहे दुश्मन? उन्हें तो जर, जोरू और जमीन चाहिए। चाहे किसी भी कीमत पर मिले।

पाठकगाणों! सावधान यह तबलीगी जमात ही तालिबानी जमात है, तालिबानी सोच इन्हीं से पैदा हुई है अर्थात् तबलीगी जमात ने ही तालीबानी सोच को पैदा किया है। आज विश्व जिस चाइनीज वायरस की महामारी से जूझ रहा है, उसका सफल इलाज तो निश्चित ही हो जाएगा, वैज्ञानिकों, डाक्टरों, वैद्यों, चिकित्सकों के द्वारा खोज लिया जाएगा। हम अपने घर पर रहकर, स्वच्छ रहकर भी बच सकेगें। किन्तु इस तबलीगी जमात से बचने का उपाय खोजना होगा। यह निश्चित जान लीजिए।

अत: आर्ष ग्रन्थों का, अपने इतिहास का, शूरवीर बलिदानियों के जीवन चरित्रों का स्वाध्याय कीजिए। और सम्पूर्ण धरा के लिए अमृत रूपी सार्वकालिक, सौर्वभौमिक (यूनिवर्सल)सनातन सत्य विचारों के वाहक बनिए।

गृहस्थ सम्बन्ध : भाग-९

-आचार्य संजीव आर्य, मु०नगर,

गतांक से आगे ..

आदरणीय पाठक वृन्द इससे पूर्व माह में प्रकाशित लेख के अन्तिम भाग को पढ़ते समय कुछ अटपटा लगा होगा, क्योंकि वहाँ दिये गये दो मन्त्रों का अर्थ प्रमादवश लिखा नहीं जा सका। असुविधा के लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ। पूर्व प्रमाद की क्षीतपूर्ति हेतु वहीं से आगे आरम्भ कर रहे हैं।

सम्बन्ध स्थिर रहें इसके लिए वधू-वर दानों प्रतिज्ञा करते हैं। वर, वधू के मस्तक पर हाथ रख के वधू की ओर देखकर स्थिरता के लिए आशंसा अर्थात् अभिलाषा आगे लिखे मन्त्रों के भाव से करें-

ओं ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत् ।
ध्रुवास: पर्वता इमे ध्रुवा स्त्री पतिकुले इयम् ।।
ओं ध्रुवमसि ध्रुवं त्वा पश्यामि ध्रुवैधि पोष्ये मयि।
मह्यं त्वादाद् बृहस्पतिर्मया पत्या प्रजावती संजीव शरद: शतम् ।।

ऋषि दयानन्द कृत इनका अर्थ ही हम यहाँ दे रहे हैं- हे वरानने! जैसे सूर्य की कान्ति वा विद्युत सूर्यलोक वा पृथिव्यादि में निश्चल, जैसे भूमि अपने स्वरूप में स्थिर, जैसे यह सब संसार प्रवाह स्वरूप में स्थिर है, जैसे प्रत्यक्ष पहाड़ अपनी स्थिति में स्थिर हैं वैसे यह तू मेरी पत्नी मेरे कुल में सदा स्थिर रह।

हे स्वामिन! जैसे आप मेरे समीप दृढ संकल्प करके स्थिर हैं या जैसे मैं आपको स्थिर दृढ देखती हूँ, वैसे ही सदा के लिए मेरे साथ आप दृढ़ रहियेगा। क्यांकि मेरे मन के अनुकूल आपको परमात्मा समर्पित कर चुका है।

शेष अगले पृष्ठ पर ....

पिछले पृष्ठ का शेष ....

वैसे ही मुझ पत्नी के साथ उत्तम प्रजायुक्त होके सौ वर्ष पर्यन्त जीविये। तथा हे वरानने पत्नी! धारण और पालन करने योग्य मुझ पति के निकट स्थिर रह। मुझको अपनी मनसा के अनुकूल तुझे परमात्मा ने दिया है तू मुझ पति के साथ बहुत उत्तम प्रजायुक्त होकर सौ वर्ष पर्यन्त आनन्दपूर्वक जीवन धारण कर। वधू-वर ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा करें कि जिससे कभी उल्टे विरोध में न चलें।

कितनी भव्य, भावपूर्ण व सुन्दर उदाहरणों से भरी हुई अभिलाषा है- सूर्य में सूर्य की प्रभा उसकी कांन्ति उसके साथ रहती है वैसे हे वधू। और हे वर! इस पूर्ण जीवन में मेरा साथ देना। जैसे पृथिवी संसार व पर्वत स्थिर हैं वैसे ही आप भी मेरे कुल में गृहस्थ में सदा विचार रहना। दोनों के द्वारा अपनी-अपनी प्रतिज्ञाओं से आशंकाओं को प्रेमपूर्वक आशंसा में बदलने का कितना सुन्दर प्रबन्ध है।

संसार में सनातन संस्कृति पर लोग आक्षेप करते हैं कि हम खाने-पीने में अन्यों की भांति नहीं हैं क्योंकि दूसरे लोग एक ही थाली में एक साथ बैठकर खा लेते हैं और हम तो पति पत्नी से भी आशा करते हैं कि वे भी झूठा खाने से बचें। वे लोग तर्क देते हैं कि एक थाली में एक साथ खाने से प्यार बढ़ता है। वास्तव में यह भी एक टोटके की भांति है ओर लोग ऐसे टोटके करते रहते हैं। अन्यथा कुत्ते आदि पशु साथ-साथ खाते और लड़ते भी रहते हैं, उनमें साथ-साथ खाने से प्रेम नहीं बढ़ता। मनुष्य बुद्धिमान प्राणी है और उसकी प्रीति गुणों में होती है, उनमें गुण व मार्यादायें ही प्रेम जैसी भावना को बनाने वा स्थिर रखने में कारण हैं ऐसा ही एक निष्ठ होना। यह भी कह सकते हैं कि यही तो सारे गुणों में शिरोमणि है तब गृहस्थ में इसका महत्व ना हो ऐसा हो ही नहीं सकता। सत्यनिष्ठ के महत्व को प्रदर्शित करने के लिए ऋषियों ने विवाह में सहभोज की विधि को रखा है। विधि के अनुसार वर और वधु को साथ-साथ भोजन करना है। किन्तु से पूर्व वदे की मार्यदा 'कवलादो भवति केवलादि।' को ध्यान में रखते हुवे दानों उसी भात से होम करते है। और होम करके शेष बचे भात को एक पात्र में निकाल के वर उस पर घृत सेंचन करें और दक्षिण हाथ पात्र के ऊपर रख के मन में ही निम्न मन्त्रों का जाप करें।

ओम् अन्पाशेन मणिना प्राणसूत्रेण प्रश्निाना।
बध्नामि सत्यगन्थिना मनश्य हृदयं च ते ।।
ओं यवेतद् धृदयं तव तदस्तु हृदयं मम।
यदिद्ँ हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव।।
ओं अन्नं प्राणस्य षडवि्ँ शस्तेन बहनामि त्वा।

अर्थात् हे वधू! जैसे किसी रत्न को पाश से बांधकर पाश के सूत्र से आभूषण के रूप में बांधा जाता है। वैसे ही मैं अन्नरूपी पाश और प्राण रूपी सूत्र से आपके हृदय और अन्तःकरण को अपने साथ बांधता हूँ।

हे वरानने! यह जो तेरा हृदय अथवा हृदयस्थ आत्मा है वह मेरा हो जाये और जो मेरा हृदय का आत्मा है वह तेरा हो जाये।

हे यशोदे! प्राण को पोषण करने हारा जो अन्न रूपी पाश या बन्धन है उससे तुझको दृढ़ प्रीति से बांधता हूँ।

उपरोक्त तीनों मन्त्रों में मुख्य सबसे मुख्य बात यह है कि आपका आत्मा और अन्तःकरण मेरा और मेरा आत्मा और अन्तःकरण आपका हो जावे। महत्वपूर्ण यह है कि नाटकों और चलचित्रादि में यह सुना तो जाता है कि हम दो जिस्म एक जान है। पर क्या ऐसा वास्तव में होता भी है। हम कहते हैं अवश्य ही यह हो सकता है। परस्पर का प्रेम और विश्वास यदि वैदिक आदर्श से जिया जावे तो वास्तव में एक दूसरे के प्रति सत्यनिष्ठ होना ही वह गुण है जो दोनों के प्रेम पाश को इतना दृढ कर सकता है। कितना गहरे बैठने वाला यह भाव है अहो भाग्य यदि हमारे परिवारों में विद्या का स्तर इतना उच्च हो जावें कि ये उदात्त भाव गृहस्थ के अंग हो जावें। पति पत्नी गृहस्थ में सारथी और महारथी की भांति है जहाँ दोनों में परस्पर विश्वास का अत्यन्त महत्व है ओर सत्य निष्ठता ही से विश्वास दृढ़ और दृढ़तर होता जाता है। विचारना चाहिए हम जिन सम्बन्धों में पैदा हुवे वह माता, पिता, भाई, बहन आदि अनेक साथ बने संबंध में हमारी क्या भूमिका है? देखा जाए तो कुछ भी नहीं वे पूर्णतः देव निर्मित सम्बन्ध है। हम तो बस ईश्वरीय व्यवस्थ से गर्भ में आए उत्पन्न हुवे और सम्बन्ध स्वतः ही जुड़ गये। यह जो पति पत्नी का सम्बन्ध है भले ही यह भी देव निर्मित हो किन्तु इसे चुनने, स्विकृति देने या बनाने वाले हम भी हैं। वस्तुतः इस सम्बन्ध को मैंने स्वयं चुना है अतः इस सम्बन्ध को बनाने, जीने व रक्षा कर सफल करने का उत्तरदायित्व गृहस्थों का परस्पर है। इसमें नेता पुरुष है बल, विद्या और आयु आदि में भी वह अधिक जिम्मेदार है। वह भी आरम्भ होती है। संस्कार होते ही जब वधू माता पिता का घर छोड़ने लगे और आँखों में आंसु भरलावे तब ऋग्वेद के निम्न मन्त्र से वर आश्वस्त करे-

ओ३म् जीवं रूदन्ति विमयन्ते अध्वरे दीर्घामनु प्रसितिं दीधियुर्नरः।
वायं पितृभ्यो य इदं समेरिरे मयः पतिभ्यो जनयः परिष्वजे।।

इस मन्त्र के भाव बड़े ही उदात हैं। आइये अर्थ देख लेते हैं- हे विद्वान् लोगों! जो मनुष्य पति रूप में स्त्रियों के जीवन सुधारने के उद्देश्य से कष्ट उठाते है और अपनी स्त्रियों को यज्ञ में प्रवेश कराते हैं और लम्बे गृहस्थाश्रम के श्रेष्ठ बन्धन को अनुकूल व्यवहार में लाते हैं और जो अपने माता पिताओं की सेवा के लिए इस सुन्दर पत्नी को अच्छी तरह प्रेरित करते हैं, उन्हीं पतिरूप पुरूषों के लिए जायाएं सुखपूर्वक समर्पित होती हैं। तीन बड़े ही महत्वपूर्ण भाव इसमें सामने हैं।

1. पति अपनी स्त्रियों के जीवन को सुधारने के उद्देश्य से कष्ट उठाते हैं और अपनी स्त्रियों को यज्ञ में प्रवेश कराते हैं।
2. अपने मातापितादि की सेवा के लिए पत्नी को अच्छी प्रकार प्रेरित करते हैं।
3. उन्हीं पतिरूप पुरुषों के लिए स्त्रियाँ सुखपूर्वक समर्पित होती है।

उपरोक्त तीनों ही भाव ग्रहस्थ के प्रमुख तीन व्यवहारों से सम्बन्धित शिक्षा देते हैं। जिनमें दो पति के कर्तव्य हैं और तीसरा पत्नी का कर्तव्य है। पति को चाहिए कि वह अपनी पत्नी को सुखी रखे चाहे स्वयं कष्ट में रहना पड़े तब भी साथ ही उसे यज्ञ अर्थात् श्रेष्ठकर्म में प्रवेश करावे। दूसरा यह कि पत्नी उसके माता-पिता आदि की सेवा कर सके इसके लिए पति का कर्तव्य है कि वह स्वपत्नी को प्रेरित करे।

पत्नी का कर्तव्य है कि एसे कर्तव्यनिष्ठ पति के प्रति वह समर्पित रहे, उसे कष्ट में न डाले, अपितु उसके लिए सुख का सम्पादन करे।

वैदिक धर्म में ही समाधान

-आचार्य सतीश, दिल्ली

आजकल इस महामारी के दौर में प्रकृति अपने शुद्धिकरण में लगी हुई है। कहा जा रहा है कि प्रकृति अपने आप को निखार रही है, नदी नाले साफ हो रहे हैं, पशु पक्षी अपने आप को स्वतंत्र पा रहे हैं, चिड़िया घरों के आसपास चहचाने लगी हैं। वायु शुद्ध होती जा रही है, आसमान नीला चमक रहा है दूर से ही पहाड़ों की बर्फीली चोटियां दिखाई दे रही हैं। लेकिन दूसरी और मानव कराह रहा है, कैद हो चुका है, लाखों की संख्या में मारा जा रहा है, हाहाकार मचा हुआ है। अर्थव्यवस्था चौपट हो गई है अर्थात् एक तरह से मानव भारी हानि उठा रहा है और प्रकृति फल-फूल रही है।

वास्तव में प्रकृति के संसाधन, सभी जीव-जंतु मानव के सदुपयोग के लिए परमात्मा द्वारा प्रदत्त हैं, लेकिन जब मानव उनका यथोचित उपयोग न लेकर उनका दोहन करने लग जाता है, जीवों को बिना कारण मारता चला जाता हैं साधनों का भय, स्वार्थ, भोग-लोलुपता के कारण संग्रह करता चला जाता है तो ईश्वरीय व्यवस्था या कुछ के अनुसार कहें तो प्राकृतिक व्यवस्था अपने आप को ठीक करने के लिए ऐसा करती है। प्रकृति का शुद्धिकरण चल रहा है और मानव हाहाकार कर रहा है।

लेकिन यदि आत्मशुद्धि के पथ पर मनुष्य चलता है तो इससे प्रकृति का भी शुद्धिकरण होता रहता है। जब मानव प्राकृतिक संसाधनों का यथोचित उपयोग करता है, उनका भी अधिकार यहां समझता है और उसी अनुसार व्यवहार करता है तो प्रकृति और जीव-जंतु भी उसे पालते पौषते हैं अर्थात् जब मनुष्य आत्म-उत्थान के पथ पर चलता है, अपने साथ साथ सभी के अस्तित्व को स्वीकारता है, उनके अधिकारों का ध्यान रखता है तो ईश्वरीय व्यवस्था ने वह भी फलता-फूलता है, सुखी होता है। लेकिन जब भय, स्वार्थ, भोग-लिक्सा में पड़कर सब का दोहन आरंभ कर देता है तो स्वयं ही विनाश की ओर चल पड़ता है। आज यही तो हो रहा है।

हमारे पूर्वजों ने वैदिक संस्कृति के अंतर्गत हमें इन सब की शिक्षा दी है, व्यवस्था की है, सिद्धांत दिए हैं जिससे हम जब आत्मशुद्धि के पथ पर होते हैं तो प्रकृति का शुद्धिकरण भी स्वयमेव होता रहता है और निरंतर प्रक्रिया चलती रहती है। जब इसके विपरीत चलते हैं तो बीच-बीच में भयानक काल आता है, मानवता करहा उठती है भयंकर दुख होता है और उसके अस्तित्व को ही खतरा हो जाता है।

इसके लिए हमारी परंपरा अर्थात् सनातन वैदिक परंपरा में आश्रम व्यवस्था दी गई है जिसको अपनाने से और अनेकों लाभों के अलावा यह भी लाभ मनुष्य को प्राप्त होता है। आश्रम व्यवस्था में मनुष्य के तीन आश्रमों में उसे प्रकृति के दोहन से रोका गया है। प्राकृतिक साधनों का उपयोग अपने आत्मिक व बौधिक उत्थान मात्र के लिए करने का निर्देश दिया गया है न कि भोग के लिए। और जब जीवन का तीन चौथाई हिस्सा भोगलिप्सा से पूर्णतःबचा हुआ है तो फिर दोहन का प्रश्न ही नहीं पैदा होता।

आज स्थिति इसके विपरीत है- सारा विश्व और सारे विश्व के मानव जन्म से लेकर मृत्यु-पर्यंत संसाधनों के दोहन में लगे रहते हैं। आश्रम व्यवस्था में तो केवल गृहस्थ में भोग की छूट प्राप्त थी। व्यक्ति गृहस्थ के पलकों को भोगे, संसाधनों को भोगे, ऐश्वर्य को प्राप्त करें इसका पूरा ध्यान रखा जाता था लेकिन इन सब की प्राप्ति भी अपरिग्रह को अपनाते हुए करें, ऐसा निर्देश भी दिया गया था। ब्रह्मचर्य काल की विद्या में स्वार्थ और भोग-लिपसा नहीं सिखाई जाती थी। गृहस्थ में जाकर मृत्यु-पर्यंत उसी में रहकर नहीं भोंगते जाना है अपितु सामर्थ्य रहते हुये ही त्यागना है आत्मउत्थान के पथ पर भरना है और मनुष्य आत्मउत्थान के पथ पर जब बढ़ता था तो प्रकृति का भी शुद्धिकरण होता रहता था। रही जीव-जंतुओं की बात तो उनके तो अधिकारों के हनन का प्रश्न ही पैदा नहीं होता था। यही व्यवस्था जब तक रही प्रकृति को मानव के विनाश द्वारा अपना संतुलन बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। मनुष्यों द्वारा ही उसका भी और स्वयं का भी पोषण उसी से किया जाता रहा।

लेकिन पिछले डेढ़ दो हजार साल से, जब से प्रकृति और जीव-जंतुओं को सहयोगी के स्थान पर उन पर अपना अधिकार समझ लिया गया, उनको केवल अपने लिए समझ लिया गया तभी से यह समस्याएं आने लगी।

वर्तमान की समस्या का समाधान तो मनुष्यों द्वारा वर्तमान की व्यवस्था से किसी ने किसी प्रकार निकाल लिया जाएगा और उससे निकल ही जाएगा लेकिन निकलेगा वह भी केवल भारी हानि के बाद। लेकिन स्थाई समाधान तो वैदिक परंपराओं को अपनाकर ही होगा। आश्रम व्यवस्था को अपनाकर परिग्रह से बचकर ही हो सकता है, जिस प्रकार से हमारे पूर्वजों ने लाखों वर्षों तक उसको बचा कर के रखा था।

आज का प्रश्न

- आचार्य धर्मपाल, कुरुक्षेत्र

प्रश्न :- तीर्थ क्या है ? क्या तीर्थ जाना चाहिए ?

उत्तर :- तीर्थ का अर्थ है तरना। किससे तरना? दुख सागर से तरना। यहां दुख सागर से कोई कल्पना न करें कि दुख का अर्थ समुद्र है। दुखों की अधिकता को दुख सागर कहते हैं।

वैदिक विचारधारा के अनुसार तीर्थ का अर्थ है कि जिससे हम दुखों से तर जाएं, वही तीर्थ है। प्रश्न होता है किस से दुखों से तर जाएं मुख्य रूप से सात तीर्थ हैं, जिनसे दुखों से छूट जाते हैं। जैसे-

१.विद्या अभ्यास अर्थात वेदों का पठन-पाठन। २. सुविचार। ३. निराकार ईश्वर उपासना। ४. धर्मानुष्ठान। ५. सत्य का संग। ६. ब्रह्मचर्य। ७. जितेंद्रिय आदि। इन्हीं को वैदिक विचारधारा में तीर्थ कहते हैं।

अब इसे थोड़ा सरलता से समझे। जब हम वेदों का पठन-पाठन करते हैं तो सुविचार अर्थात् सुंदर-सुंदर विचारो का निर्माण होता है और जब सुंदर विचारों का निर्माण होता है तो तभी निराकार ईश्वर की उपासना में सफलता मिलती है और जब ईश्वर उपासना में सफलता मिलती है तो धर्म का अनुष्ठान अर्थात् वेद के सिद्धांतों का क्रियात्मक रूप सिद्ध होता है और जब धर्म अनुष्ठान होता है तो पूर्णतया सत्य पर विश्वास हो जाता है और जब सत्य का ही संग करता है तो तभी वह ब्रह्मचर्य का पालन अर्थात वीर्य रक्षा करने में समर्थ होता है और जब वीर्य की रक्षा करता है तभी वह जितेंद्रिय अर्थात् अपनी इंद्रियों को जीतने का सामर्थ्य अर्जित करने लग जाता है और जब अपनी इंद्रियों को रोकने का सामर्थ्य हो जाता है तो व्यक्ति दुख सागर से तर जाता है यही उपरोक्त सात तीर्थ हैं।

जो जन उपरोक्त तीर्थ छोड़कर अज्ञानता वश चार धाम, नदियों का स्नान, मक्का मदीना, यूरेसलम, व्यास, सिरसा डेरा, आबू या टंकारा आदि स्थानों को तीर्थ मानते हैं, वे लोग उपरोक्त स्थानों पर लूटते-लूटाते, घूमते-फिरते हैं तथा अपनी स्त्रियों की भी अस्मिता तक लूटवाकर सर्वस्व गवांते फिरते हैं।

संध्या काल

वैशाख-मास, ग्रीष्म-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077
(9 अप्रैल 2020 से 7 मई 2020)
प्रातः कालः 5 बजकर 45 मिनट से (5.45 A.M.)
सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से (6.45 P.M.)

ज्येष्ठ-मास, ग्रीष्म-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077
(8 मई 2020 से 5 जून 2020)
प्रातः कालः 5 बजकर 30 मिनट से (5.30 A.M.)
सांय कालः 7 बजकर 00 मिनट से (7.00 P.M.)

व्यवहारभानुः - आचरण की शिक्षा के लिए ऋषि का श्रेष्ठ ग्रन्थ

ऋषि दयानन्द ने वेद के सिद्धान्तों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए अन्य कार्यों के साथ-साथ एक पूर्णकालिक लेखक के रूप में भी अनेकों ग्रन्थों की रचना की है। उन्होंने विशुद्ध व्याकरण के ग्रन्थों से लेकर वेदभाष्य तक व सत्यार्थ प्रकाश जैसे कालजयी ग्रन्थ से लेकर सामान्य सिद्धान्त अनुरूप व्यवहार के लिए व्यवहारभानु जैसी सामान्य जन के लिए भी अत्यन्त उपयोगी पुस्तकों की रचना की है। ऋषि का एक-एक शब्द व पंक्ति व्यक्ति के लिए अमूल्य प्रेरणा का स्रोत है। आइए उनकी व्यवहारभानुः पुस्तक के स्वाध्याय द्वारा वैदिक सिद्धान्तों के परिपालन की दिशा में आगे बढ़कर अपने-अपने आचरण को वेदानुकुल बनाएं और ऋषि के ही शब्दों के अनुरूप- **''अपने तथा अपने-अपने सन्तान तथा विद्यार्थियों का आचार अत्युत्तम करें, कि जिससे आप और वे सब दिन सुखी रहें।''**

यहाँ प्रस्तुत है व्यवहारभानुः पुस्तक, आईये इसका स्वाध्याय करते हैं। ध्यान से पढ़ें तथा विचार करें कि यदि हम ऋषि के बताए अनुसार व्यवहार करते हैं तो हम कितना अपना व दूसरों का हित कर सकते हैं और समाज में व्याप्त अनेक प्रकार के दुर्व्यवहारों से न केवल स्वयं बच सकते हैं अपितु अपनी सन्तानों तथा शिष्यों को भी बचा सकते हैं।

गवर्गण्ड-"क्यों जी ! कोई मेरे तुल्य राजा और तुम्हारे सदृश सभासद् कभी हुए होंगे और आगे कोई होंगे वा नहीं? " **खुशामदी**-"नहीं, नहीं, कदापि नहीं।" न हुआ, न होगा, और न है। **गवर्गण्ड**-"सत्य है, क्या ईश्वर भी हमसे अधिक उत्तम होगा?" **खुशामदी**-"कभी नहीं हो सकता। क्योंकि उसको किसने देखा है? आप तो साक्षात् परमेश्वर हैं। क्योंकि आपकी कृपा से दरिद्र का धनाढ्य, अयोग्य से योग्य और अकृपा से धनाढ्य का दरिद्र, योग्य से अयोग्य तत्काल ही हो सकता है।"

इतने में नियत किये प्रातःकाल को सायंकाल मानकर सोने को सब लोग गये। जब सायंकाल हुआ तब फिर सभा लगी। इतने में सिपाहियों ने आकर साधुओं के झगड़े की बात कही। सुनकर गवर्गण्ड ने सभा सहित वहाँ जाके साधुओं से पूछा कि-"तुम शूली पर चढ़ने के लिए क्यों सुख मानते हो?" **साधु**-"तुम हमसे मत पूछो, चढ़ने दो, समय चला जाता है। ऐसा समय हमको बड़े भाग्य से मिला है।" **गवर्गण्ड**-"इस समय शूली पर चढ़ने का क्या फल होगा?" **साधु**-"हम नहीं कहते, जो चढ़ेगा वह फल देख लेगा। हमको चढ़ने दो।" **गवर्गण्ड**- "नहीं-नहीं। जो फल होता हो सो कहो। सिपाहियो! इनको इधर पकड़ लाओ।" [वे] पकड़ लाये।

साधु-"हमको क्यों नहीं चढ़ने देते? झगड़ा क्यों करते हो।" **गवर्गण्ड**-"जब तक तुम इसका फल न कहोगे तब तक हम कभी न चढ़ने देंगे।" **साधु**-"दूसरे को कहने की तो बात नहीं है, परन्तु तुम हठ करते हो तो सुनो- 'जो कोई मनुष्य इस समय में शूली पर चढ़कर प्राण छोडे देगा, वह चतुर्भुज होकर विमान में बैठके आनन्दस्वरूप स्वर्ग को प्राप्त होगा।" **गवर्गण्ड**-"अहो! ऐसी बात है तो मैं ही चढ़ता हूँ, तुझको न चढ़ने दूँगा।" ऐसा कहकर झट आप ही शूली पर चढ़कर प्राण छोड़ दिये। साधु अपने आसन पर आये। चेले ने कहा कि-"महाराज! चलिए, यहाँ अब न रहना चाहिए।" गुरु ने कहा कि-"अब कुछ चिन्ता नहीं। जो पाप की जड़ गवर्गण्ड था, वह मर गया। अब धर्मराज्य होगा। क्या चिन्ता है, यहीं रहो।

उसी समय उसका छोटा भाई बड़ा विद्वान्, पिता के सदृश धार्मिक और जो उसके पिता के समान धार्मिक सभासद् और प्रजा में से सत्पुरुष, जो कि उसके पिता के मरने के पश्चात् गवर्गण्ड ने निकाल दिये थे वे सब आके **सुनीति** नामक छोटे भाई को राज्याधिकारी करके उसके मुर्दे को सूली पर से उतारके जला दिया। और खुशामदियों की मण्डली को अत्युग्र दण्ड देके कुछ कैद कर दिये और बहुतों को नौका में बैठाकर किसी समुद्र के बीच निर्जन द्वीपान्तर में बन्दीखाने में डालकर, अत्युत्तम विद्वान् धार्मिकों की सम्मति से श्रेष्ठों का पालन, दुष्टों का ताड़न, विद्या, विज्ञान और सत्यधर्म की वृद्धि आदि उत्तम कर्म करके पुरुषार्थ से यथायोग्य राज्य की व्यवस्था चलाने लगे और पुनः प्रकाशवती नगरी [**में 'यथायोग्य करेहारी'**] नाम की व्यवस्था चलाने लगे। और पुनः नगरी का **प्रकाशवती** नाम प्रकाश हुआ और उचित समय पर सब उत्तम काम होने लगे।

जब जिस देशस्थ प्राणियों का अभाग्य उदय होता है तब गवर्गण्ड के सदृश स्वार्थी, अधर्मी प्रजा का विनाश करनेहारा राजा, धनाढ्य और खुशामदियों की सभा, और उनके समतुल्य अधर्मी, उपद्रवी, राजविद्रोही प्रजा भी होती है। और जब जिस देशस्थ प्राणियों का सौभाग्य उदय होने वाला होता है तब सुनीति के समान धार्मिक, विद्वान् [राजा], पुत्रवत् प्रजा का पालन करने वाली राजासहित सभा और धार्मिक पुरुषार्थी पिता के समान राजसम्बन्ध में प्रीतियुक्त मंगलकारिणी प्रजा होती है।

जहाँ अभाग्योदय, वहाँ विपरीतबुद्धि मनुष्य परस्पर द्रोहादि स्वरूप धर्म से विपरीत दुःख के ही काम करते जाते हैं। और जहाँ सौभाग्य उदय वहाँ परस्पर उपकार, प्रीति, विद्या, सत्य धर्म आदि उत्तम कार्य अधर्म से अलग होकर करते रहते हैं, वे सदा आनन्द को प्राप्त होते हैं। जो मनुष्य विद्या कम भी जानता हो, परन्तु पूर्वोक्त दुष्ट व्यवहारों को छोड़कर धार्मिक होके खाने-पीने, बोलने-सुनने, बैठने-उठने, लेने-देने आदि व्यवहार सत्य से युक्त यथायोग्य करता है, वह कहीं कभी दुःख को प्राप्त नहीं होता। और जो सम्पूर्ण विद्या पढ़के पूर्वोक्त उत्तम व्यवहारों को छोड़कर दुष्ट कर्मों को करता है वह कहीं, कभी सुख को प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए सब मनुष्यों को उचित है कि आप अपने लड़के, लड़की, इष्ट-मित्र, अड़ोसी-पड़ोसी और स्वामी-भृत्य आदि को विद्या और सुशिक्षा से युक्त करके सर्वदा आनन्द करते रहें।।

इति श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनिर्मितो व्यवहारभानुः समाप्तः ॥

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	23 अप्रैल	दिन-गुरुवार	मास-वैशाख	ऋतु-ग्रीष्म	नक्षत्र-अश्विनी
पूर्णिमा	07 मई	दिन-गुरुवार	मास-वैशाख	ऋतु-ग्रीष्म	नक्षत्र-स्वाति
अमावस्या	22 मई	दिन-शुक्रवार	मास-ज्येष्ठ	ऋतु-ग्रीष्म	नक्षत्र-कृत्तिका
पूर्णिमा	05 जून	दिन-शुक्रवार	मास-ज्येष्ठ	ऋतु-ग्रीष्म	नक्षत्र-अनुराधा

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आयोजित दो दिवसीय सत्रों व सभा से सम्बन्धित नवीन जानकारी सभा की बेवसाईट-

www.aryanirmatrisabha.com

पर उपलब्ध है। अत: आप वहाँ से जानकारी ले सकते हैं। यह पत्रिका भी प्रत्येक मास दिनांक 10 को सभा की बेवसाईट पर डाल दी जाती है अत: पत्रिका को पढ़ने के लिए साईट के लिंक

www.aryanirmatrisabha.com/हिन्दी में पत्रिका पर जाएं।

08 अप्रैल- 07 मई 2020 — वैशाख — ऋतु- ग्रीष्म

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
			स्वाति कृष्ण द्वितीया 9 अप्रैल	विशाखा कृष्ण तृतीया 10 अप्रैल	अनुराधा कृष्ण चतुर्थी 11 अप्रैल	ज्येष्ठा कृष्ण पंचमी 12 अप्रैल
मूल कृष्ण षष्ठी 13 अप्रैल	पूर्वाषाढ़ा कृष्ण सप्तमी 14 अप्रैल	उत्तराषाढ़ा कृष्ण अष्टमी 15 अप्रैल	श्रवण कृष्ण नवमी 16 अप्रैल	धनिष्ठा कृष्ण दशमी 17 अप्रैल	शतभिषा कृष्ण एकादशी 18 अप्रैल	पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण द्वादशी 19 अप्रैल
पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण त्रयोदशी 20 अप्रैल	उत्तराभाद्रपदा कृष्ण चतुर्दशी 21 अप्रैल	रेवती कृष्ण अमावस्या 22 अप्रैल	अश्विनी कृष्ण अमावस्या 23 अप्रैल	भरणी शुक्ल प्रतिपदा 24 अप्रैल	कृत्तिका शुक्ल द्वितीया 25 अप्रैल	रोहिणी शुक्ल तृतीया 26 अप्रैल
मृगशिरा शुक्ल चतुर्थी 27 अप्रैल	आर्द्रा शुक्ल पंचमी 28 अप्रैल	पुनर्वसु शुक्ल षष्ठी 29 अप्रैल	पुष्य शुक्ल सप्तमी 30 अप्रैल	आश्लेषा शुक्ल अष्टमी 1 मई	मघा शुक्ल नवमी 2 मई	पू॰ फाल्गुनी शुक्ल दशमी 3 मई
उ॰ फाल्गुनी शुक्ल एकादशी/द्वादशी 4 मई	हस्त शुक्ल त्रयोदशी 5 मई	चित्रा शुक्ल चतुर्दशी 6 मई	स्वाति शुक्ल पूर्णिमा 7 मई			

08 मई- 05 जून 2020 — ज्येष्ठ — ऋतु- ग्रीष्म

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
				विशाखा कृष्ण प्रतिपदा 8 मई	अनुराधा/ज्येष्ठा कृष्ण द्वितीया 9 मई	मूल कृष्ण तृतीया 10 मई
पूर्वाषाढ़ा कृष्ण चतुर्थी 11 मई	उत्तराषाढ़ा कृष्ण पंचमी 12 मई	श्रवण कृष्ण षष्ठी 13 मई	श्रवण कृष्ण सप्तमी 14 मई	धनिष्ठा कृष्ण अष्ठमी 15 मई	शतभिषा कृष्ण नवमी 16 मई	पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण दशमी 17 मई
उत्तराभाद्रपदा कृष्ण एकादशी 18 मई	रेवती कृष्ण द्वादशी 19 मई	अश्विनी कृष्ण त्रयोदशी 20 मई	भरणी कृष्ण चतुर्दशी 21 मई	कृत्तिका कृष्ण अमावस्या 22 मई	रोहिणी शुक्ल प्रतिपदा 23 मई	मृगशिरा शुक्ल द्वितीया 24 मई
मृगशिरा तृतीया 25 मई	आर्द्रा शुक्ल चतुर्थी 26 मई	पुनर्वसु शुक्ल पंचमी 27 मई	पुष्य शुक्ल षष्ठी 28 मई	आश्लेषा शुक्ल सप्तमी 29 मई	मघा/पू॰ फाल्गुनी शुक्ल अष्टमी 30 मई	उ॰ फाल्गुनी शुक्ल नवमी 31 मई
हस्त शुक्ल दशमी 1 जून	चित्रा शुक्ल एकादशी 2 जून	स्वाति शुक्ल द्वादशी 3 जून	विशाखा शुक्ल त्रयोदशी/चतुर्दशी 4 जून	अनुराधा शुक्ल पूर्णिमा 5 जून		

Rishi Dayanand - His Life And Work

-Saroj Arya, Delhi

The change of climate did no good. Swamiji was sinking, his hands and feet were always cold. The best medical aid was proving of no avail. His attendants thought of shifting him to Ajmer: he was unwilling but yield to their repeated requests. At Ajmer he was under the treatment of Dr. Lachhman Dass and Hakim Pir Ali. The latter stated the he had been poisoned, and could have got rid of. During the course of a month for which period Swamiji had been ailing, the poison had been absorbed into the system. Dr. Newton, a well-known physician of Ajmer, came next to examine Swamiji, and applied poultice to his chest. The doctor declared that he had seldom come across any man who under such a terrible condition was so calm. The Swamiji threw poultice saying," It is of no use now."The shades of evening were closing. The Swami got himself shaved and desired Swami Atmanand and Gopal Giri to be brought to him.

"What is your wish?"

"none but that you should be restored to health."

"What is left of this mortal frame now."

He placed his hand on the head of each in turn, saying: "Live in peace, performing your duty. Don't lose heart. To meet and then to part is the law of nature.

He then cast a look at the admirers who had come from various parts of India to attend on him and started chanting Vedic hymns. It was a glorious moment. His voice didn't falter, his pronunciation was sound and his words unbroken. Before long he was in trance. Guru Dutt- the well known agnostic- was there leaning against a wall, lost in the glory of this scene. Death- fearful death- seemed to have lost its fangs in the presence of this superman armed with Divinity. The summons had come, and was readier to go. Such resignation to the Divine Will was an uncommon sight.

Guru Dutt was a changed man.

The Rishi opened his eyes.

"Merciful and Almighty Lord, such is your will, yea such is your will, and Thy will be done. What a good Lila didst Thou enact?"

The Rishi's glorious sojourn in this world of ignorance and misery was over.

द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

मुझे यह पहला आर्य सभा में उपस्थित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और कई सारी विकृतियां भी दूर हुई। यह सभा और बताये गये आर्य निर्देश अवश्य ही मेरे और मेरे परिवार पर काफी प्रभाव छोड़ेगी, इसका मुझे विश्वास है।

मैं भविष्य में अवश्य ही इस महान कार्य के लिए हर तरह से सहयोग दूंगा।

नाम : डॉ. मैनपाल, आयु : 37 वर्ष, योग्यता : पी.एच.डी., कार्य : पी.डी.आर, पता : मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश।

सत्र का अनुभव बेहद ज्ञानवर्धक, सुस्पष्ट, सरल हुआ। मन में भिन्न-भिन्न धर्मों, मतों, तथा सामाजिक भ्रांतियों के बारे में जो भी कुछ शंकाए थी लगभग उन सभी का अच्छी प्रकार से समाधान प्राप्त करने में सफलता प्राप्त हुई। जो भी जीवन में छोटे-मोटे व्यसन आदि पहले किसी भी भ्रम के कारण जीवन में थे, उनका भी पूर्ण रूप से त्याग करने का दृढ़ संकल्प आज लिया। तथा राष्ट्र के प्रति क्या कर्तव्य आज की परिस्थितियों में हमारा बनता है, उसके बारे में संकल्प लिया तथा आर्य पथ पर आज से ही अग्रसर होने का दृढ़ संकल्प किया।

मैंने जिस प्रकार इस 2 दिवसीय शिविर में आर्य समाज के सिद्धान्तों को जाना, उसी प्रकार आज से ही दिन-रात इनका प्रचार-प्रसार करने में अपने जीवन के आगे का समय जितना भी हो सकेगा लगाऊंगा।

नाम : सुधीर धनखड़, आयु : 38 वर्ष, योग्यता : बी.ए., कार्य : युवा प्रधान, आई.आई.पी., पता : सोनीपत, हरियाणा।

मेरा दो दिन का सत्र बहुत ही अच्छा रहा है। मुझे दो दिन में अपने देश की स्थिति का पता चला। इस सत्र से मुझे ईश्वर, आर्य व वेदों का ज्ञान हुआ। अगर आगे कोई भी सत्र होता है तो मुझे सूचना मिले तो मैं सत्र अवश्य लगाऊंगा। मैं आर्य धर्म का कठोरता से पालन करूंगा। और देश के हर युवक के आर्यकरण में सहयोग करूंगा।

आर्य सभा का आयोजन करना व क्षत्रिय सभा में सहयोग देना चाहता हूँ।

नाम : प्रवीन, आयु : 25 वर्ष, योग्यता : बी.ए., कार्य : छात्र, पता : जीन्द, हरियाणा।

सत्र के बाद समझा है कि पहले मैं अन्धकार में था। 32 साल ऐसे ही नष्ट कर दिये। मैं अपने पूर्वजों को भूल बैठा था। स्कूल, कॉलेज और अन्य संस्थाओं में मुझे ऐसा ज्ञान कभी नहीं मिला है। जो आज सत्र मैं मिला है आज से में पना जीवन आर्य बनकर जीऊंगा।

खुद आर्य बनना, और सबको आर्य बनाना, अपने राष्ट्र की रक्षा करना ,आर्यों के सिद्धान्तों पर चलना मेरा कर्तव्य होगा।

नाम : सुखविन्द्र, आयु : 32 वर्ष, योग्यता : 12, कार्यः होटल जॉब दिल्ली, पता : घोघड़िया, हरियाणा।

मैं हूँ कोरोना ...

-राकेश आर्य, हरसौला, कैथल,

मैं हूँ कोरोना
आया हूँ मैं चीन से,
सबकी नींद छीन के,
हल्के में मुझे मत लेना,
दिन-रात मुझे याद करके रोना,
क्योंकि मैं हूँ कोरोना।।
अमेरिका भी मुझसे डरता है,
आदमी तिल-तिल कर मरता है,
हाथ अब कभी न मिलाना,
नमस्ते ही अब करना,
क्योंकि मैं हूँ कोरोना ।।
पूरी दुनिया है खौफ में,
डॉक्टर, वैज्ञानिक भी हैं सोच में,
ना है मेरा कोई इलाज,
मैं हूँ मौत का सैलाब,
याद करके मुझे रोना,
क्योंकि मैं हूँ कोरोना ।।
पूरी दुनिया है कनफ्यूज,
यूरोप, अमेरिका को कर दिया फ्यूज,
धीरे से पूरी दुनिया में फैल जाऊँगा,
यदि नहीं संभले तो,
भारत में भी आऊँगा,
फिर हाहाकार मचाऊँगा,
हजारों को पल में मार जाऊँगा,
पूरा संसार है मेरे सामने बौना,
क्योंकि मैं हूँ कोरोना ।।
अभी भारत में दी है मैंने दस्तक,
पूरी दुनिया है मेरे आगे नतमस्तक,
दुनिया के निकाले हैं मैंने अश्क,
दुनिया है व्यस्त, मैं हूँ मस्त,
मेरे सामने पूरा संसार है बौना,
क्योंकि मैं हूँ कोरोना ।।
मेहरबान हुए मुझ पर मौलाना,
भारत में भी फैला दिया कोरोना,
ये निकले मेरे सबसे बड़े सहायक,
चले थे बनने सबसे बड़े नायक,
न रहे अब ये किसी भी लायक,
बनने चले थे मेरे सहायक,
हुआ इन्हें ऐसा वहम,
चले मांगने अल्लाह से रहम,
नहीं होगा हमें कोरोना,
टूट गया इनका वो वहम,
ध्यान से जान लो मुझे मौलाना,
मैं हूँ कोरोना ।।
यदि मुझसे है छुटकारा पाना,
तो घर से बाहर न आना,
यदि आओगे घर से बाहर,
लग जाऊँगा मैं तुम्हारे साथ,
और फिर सबको बीमार कर जाऊँगा,
इसलिये मानो सबका का कहना,
और घर पर ही रहना,
क्योंकि मैं हूँ कोरोना ।।
यदि बचना है मुझसे,
थोड़ा मानो 'राकेश' का कहना,
घर बैठो आराम से, ऐसा राकेश का कहना,
संभल कर रहना कहीं हो जाए ना कोरोना।

आर्य निर्माणशाला में विभिन्न स्थानों पर निर्मात्री सभा के आचार्यों द्वारा आर्य व आर्या निर्माण

स्वामी व प्रकाशक आचार्य हनुमत्प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।